प्राकृत भाषा का वैशिष्ट्य

– डॉ. आशीष जैन आचार्य शाहगढ़, सागर
(राष्ट्रपति सम्मानित)
संयुक्त मंत्री, अ.भा.दि. जैन शास्त्रि परिषद्

प्रस्तावना –

भाषा भावों को उद्घाटित करना सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। भाषा में बोली, ध्वनि, संकेत आदि का माध्यम सहज है। सभी भाषाओं का अपना रस और आनंद है। भाषाओं की मधुरता उनमें प्रयोग किए जाने शब्द हैं, जिनसे मधुरता भी आती है और कर्कशता भी आती है। शब्दों के अर्थ अनेक बार क्षेत्रीय बोलियों के अनुरूप भी परिवर्तित हो जाते हैं। ऐसे में, हमें आवश्यक होता है कि हम शब्दों की समीचीन व्युत्पत्ति, उनके अर्थ और प्रयोग का जाने।

भारत भाषाओं का समृद्ध देश है। जहाँ भाषाओं की विविधता शब्दों के मधुर अर्थों और ध्वनियों को देनी वाली है। जिस प्रकार से प्रत्येक कार्य का एक मुख होता है, प्रत्येक ध्वनि का मुख होता है, प्रत्येक जीवन का मुख होता है, प्रत्येक मार्ग का प्रवेशद्वार होता है वैसे ही भाषाओं का कोई न कोई मुखद्वार जरूर होना चाहिए। मुखद्वार वही है जो सहज हो, जो स्वयमेव निःसृत हो, जिसके लिए सीखना न पड़े स्वयमेव ही सीखकर बोलना, समझना प्रारंभ कर दें।

जैन दर्शन कहता है कि तीर्थंकर भगवान की वाणी ध्वनि रूप होती है। जिसमें समाहित बीजपद से ज्ञान का विस्तार होता है। यह विषय स्पष्ट है कि ध्वनि से ही भाषाओं का और बोलियों का सृजन हुआ है। हम पशुओं में देखते हैं, उनके पास सिर्फ ध्वनि है, बोली और भाषा नहीं है। वे जानते हैं और समझते हैं। जंगलों में जाने वाले लोग भाषा या बोली का प्रयोग नहीं करते हैं विभिन्न ध्वनियों का प्रयोग करते हैं। प्रत्येक कार्य के लिए ध्वनियाँ भी भिन्न-भिन्न हैं।

इन्हीं ध्वनियों से सहज रूप से बोली निकली है। इन्हीं बोलियों में प्राकृत नाम की एक बोली है। जो अपने विस्तृत स्वरूप में है। प्राकृत ने बोली से आगे बढ़कर भाषा का रूप लिया है। प्राकृत ने बड़ी सहजता रखी। विभिन्न प्रान्तों और क्षेत्रों की ध्वनियों को सम्मिलित करते हुए शौरसेनी, अर्धमागधी, मागधी, पैशाची आदि में विस्तार किया। इन सभी में साहित्य की खूब सृजना हुई है। प्राकृत भाषा भारत की नसों में वह रही है। अवहट्ट, अपभ्रंश, हिन्दी, मराठी, बंगला, पंजाबी, असमिया, उड़िया

आदि में प्राकृत भाषा का अविरल स्वरूप परिलक्षित है। मान्यताएं कुछ भी हो, परंतु सत्यता इस बात की द्योतक है कि प्राकृत भाषा ने बोलियों को समृद्ध किया है और जनमानस में शब्दों का असीमित भण्डार प्रदान किया है। कई लाख शब्द प्राकृत भाषा में है, जो अन्य किसी भी भाषा में उपलब्ध नहीं है। यह प्राकृत भाषा राष्ट्र का गौरव है। इसी गौरव को भारत सरकार ने हाल ही में शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान करके अधिक गौरवशाली बना दिया है।

संस्कृत भाषा को छोड़ दें, तो प्रायः अनेक भाषाओं में एकवचन और बहुवचन दो ही वचनों की अवधारणा निहित है। हिन्दी, बंगला, मराठी आदि में प्राकृत भाषा की तरह दो ही वचन हैं। इससे सहज स्पष्ट होता है कि कहीं न कहीं इन भाषाओं का सीधा संबंध प्राकृत से हैं।

जो जो बोला गया है, उसके शब्दों को जोड़ा गया है, उसके प्रयोगों को बनाया गया है। अर्थात् बोली से भाषा तक का सफर किया है न कि भाषा से बोली का सफर। क्योंकि बोली सहज होती है बंधी हुई नहीं होती है। समझ विकसित होती है। जिस भाषा को पहले तैयार किया जाता है फिर बोली का रूप मिलता है ऐसी स्थिति में शब्दों का भण्डार निश्चित होने से उनका सहज प्रयोग नहीं हो पाता है।

भारत की प्रान्तों की भाषा और बोलियों का स्वरूप यदि देखा जाए तो जितने भी देशज शब्द हैं, उनमें प्राकृत की ही पुट सम्मिलित हैं। इसलिए प्राकृत को अत्यंत सहज और सरल कहा गया है।

प्राकृत साहित्य भारतीय परम्परा की अमूल्य धरोहर है। प्राकृत भाषाओं में लिखा गया गद्य और पद्यात्मक साहित्य सम्मिलित है। इस साहित्य के अनेक आयाम हैं, जिनमें धार्मिक, दार्शनिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, और सांस्कृतिक दृष्टिकोण सम्मिलित हैं।

प्राकृत साहित्य प्राकृत भाषाओं में रचित है जो संस्कृत की तुलना में सरल और लोकभाषा-आधारित है। इनमें सबसे प्राचीन शौरसेनी और अर्धमागधी प्राकृत हैं, जो जैन धार्मिक ग्रंथों का आधार है। जैन आगम या जैनश्रुतांग इसके प्रमुख उदाहरण हैं। प्राकृत भाषाएँ भारत की विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों का समष्टिगत रूप हैं, जिनका उपयोग धार्मिक, काव्यात्मक और कथात्मक साहित्य में हुआ है। यह साहित्य भाषा के विकास और भारतीय संस्कृति में लोकजीवन के पक्ष का मूल्यवान स्रोत है।

प्राकृत साहित्य विभिन्न प्राकृत बोलियों में विभाजित है – अर्धमागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, चूलिका पैशाची, पैशाची, मागधी, पालि एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाएं । इन भाषाओं में धार्मिक और सांसारिक विषयों पर ग्रंथ रचे गए। शौरसेनी प्राकृत का उपयोग जैन ग्रन्थों के अलावा संस्कृत नाटकों में स्त्री

पात्रों तथा आम जनता की भाषा के रूप में भी हुआ। शौरसेनी प्राकृत को सबसे शुद्ध प्राकृत माना गया है। प्राकृत साहित्य सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक जीवन का सजीव दर्पण है, जिसमें तत्कालीन लोकजीवन, नीतिशास्त्र और इतिहास के तत्व समाहित हैं।

यह साहित्य भाषा, संस्कृति और इतिहास के अध्ययन हेतु अनमोल है। यह भारतीय समाज की लोकभाषाओं के विकास, धार्मिक विचारों और सामाजिक परंपराओं को समझने का माध्यम है। इसके माध्यम से वैदिक संस्कृत से अलग भाषा विकास के पहलू स्पष्ट होते हैं तथा जैन और बौद्ध धर्म की शिक्षाएं विस्तृत रूप में मिलती हैं। प्राकृत साहित्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्गम का भी स्रोत माना जाता है। प्राकृत भाषा के वैशिष्ट्य को समझने के लिए यहाँ हम परिचर्चा करते हैं।

प्राकृत शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ – प्राकृत शब्द प्रकृति से बना है। प्रकृति की व्युत्पत्ति है – प्र+कृ+क्तिन् अर्थात् प्र उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से क्तिन् प्रत्यय होने से प्रकृति बना है। प्रकृतेः आगतम् इस व्युत्पत्ति के आधार पर प्राकृत बना है। जिसका अर्थ प्रकृति से उत्पन्न, नैसर्गिक, स्वभाव। प्रक्रियते यया सः प्रकृतिः अर्थात् जिससे दूसरे पदार्थों की उत्पत्ति हो।

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति और विकास – प्राकृत भाषा की उत्पत्ति जनसामन्य के बोलचाल से ही हुई है। जनसामान्य में जो बोला, कालान्तर में उसे भाषा के रूप में ग्रहण कर लिया गया और वही प्राकृत है। प्राकृत भाषा के रूप में विकसित हुई, न कि भाषा से बोली बनी है। बोली से भाषा बनी है।

भारतीय संस्कृति में वेदों का बहुत महत्व है। वेदों की प्रामणिकता एवं काल के संदर्भ में अनेक विद्वानों के अभिमतों में ऊहापोह है। फिर भी, वेदों की रचना कब हुई ? किसने की ? क्यों की ? यह प्रसंग नहीं है। यहाँ प्रसंग भाषा का है। इसलिए उसके ही संदर्भ में कह रहे हैं। वेदों की भाषा छान्दस् है। छान्दस् न तो संस्कृत है और न ही प्राकृत है। वेदों में प्रयुक्त शब्द इस बात के द्योतक है कि जनसामान्य की भाषा का वहाँ भी ध्यान रखा गया है। प्राकृत भाषा के लिए छान्दस् और छान्दस् के लिए प्राकृत एवं दोनों के लिए भाषा विकास का सीधा संबंध है। इसलिए प्राकृत की उत्पत्ति का कोई मूल नहीं है। फिर भी इसकी उत्पत्ति के संदर्भ में अनेक मत हैं, जिन्हें यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं –

प्राकृत को बहता नीर और संस्कृत को बद्ध महासरोवर कहा है। प्राकृत और संस्कृत दोनों में छान्दस् के तत्त्व विद्यमान है। छान्दस् स्रोत से प्रवाहित होने पर एक वृद्धा कुमारी बनी रही और दूसरी कुमारी युवती। तात्पर्य यह है कि संस्कृत पुरानी होती हुई भी सदा मौलिक रूप धारण करती है, इसके विपरीत प्राकृत चिर युवती है, जिसकी संतानें निरंतर विकसित होती जा रही है। संस्कृत को कूपजल और प्राकृत को बहता नीर कहा गया है।

संस्कृत से प्राकृत भाषा की उत्पत्ति हुई हैं इसके पक्ष में मत – आचार्य हेमचन्द्र, मार्कण्डेय, धनिक सिंहदेव गणी आदि प्राकृत की प्रकृति संस्कृत को मानते हैं। जिनके संदर्भ निम्न हैं –

प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम्। संस्कृतान्तरं प्राकृतमधिक्रियते। संस्कृतानन्तरं च प्राकृतस्यानुशासनं। सिद्धसाध्यमानभेदसंस्कृतयोरेव तस्य लक्षणं न देश्यस्य इति ज्ञापनार्थम्।[i]

अर्थात् प्रकृति संस्कृत है, इस संस्कृत से आयी हुई भाषा प्राकृत है। संस्कृत के पश्चात् प्राकृत का अधिकार आरंभ होता है। प्राकृत में जो शब्द संस्कृत के मिश्रित है, उनको संस्कृत के समान ही अवगत करना चाहिये। तद्भव शब्द दो प्रकार के है – साध्यमान संस्कृतभव और सिद्ध संस्कृतभव। अनुशासन इन दोनों प्रकार के शब्दों का ही प्रतिपादित है। देश्य शब्दों का नहीं।

पुनश्च –

प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं प्राकृतमुच्यते।[ii]

प्रकृति संस्कृत है। उससे जो उत्पन्न है वह प्राकृत है।

आगे कहते हैं –

प्रकृतेः आगतं प्राकृतम्। प्रकृतिः संस्कृतम्।[iii]

प्रकृति से आई हुई प्राकृत है और प्रकृति संस्कृत है।

प्राकृतस्य तु सर्वमेव संस्कृतं योनिः।[iv]

प्राकृत की योनि अर्थात् उत्पत्तिस्थान संस्कृत है।

प्रकृतेः संस्कृतायास्तु विकृतिः प्राकृती मता।[v]

प्रकृति से संस्कृत और संस्कृत की विकृति से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है।

प्रकृतेः संस्कृताद् आगतं प्राकृतम्।[vi]

प्रकृति से संस्कृत और संस्कृत से प्राकृत आई है।

४) प्राकृत शब्द प्रदीपका के रचयिता – नरसिंह

५) गीतगोविंद की रसिक सर्वस्व टीका के लेखक – नारायण

प्रक्रियते यया सः प्रकृतिः अर्थात् जिससे दूसरे पदार्थों की उत्पत्ति हो मूलतत्त्व, व्युत्पत्ति के आधार पर प्राकृत के लिये संस्कृत को ही मूल उत्पादक कहा है।[vii]

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति स्वतंत्र है और संस्कृत की उत्पत्ति भी प्राकृत भाषा से हुई है – के पक्ष में मत –

प्राकृतसंस्कृतमागधपिशाचभाषाश्च शौरसेनी च।

षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः।। काव्यालंकार२/१२

प्राकृतेति सकलजगज्जंतूनां व्याकरणादिभिरनाहितसंस्कारः सहजो वचन व्यापारः प्रकृतिः, तत्र भवं सैव वा प्राकृतम्। आरिसवयवो सिद्धं देवाणं अद्धमागहा वाणी इत्यादिवचनात् वा प्राक् पूर्वं कृतं प्राकृतं बालमहिलादिसुबोधं सकलभाषनिबंधभूतं वचनमुच्यते। मेघनिर्मुक्तजलमिवैकस्वरूपं तदेव च देशविशेषात् संस्कारकरणाच्च समासादितविशेषं सत् संस्कृताद्युत्तरविभेदानाप्नोति। अत एव शास्त्रकृता प्राकृतमादौ निर्दिष्ट तदनु संस्कृतादीनि। पाणिन्यादिव्य करणोदितशब्दलक्षणेन संस्करणात् संस्कृतमुच्यते।[viii]

रुद्रटकृत काव्यालंकार के श्लोक की व्याख्या करते हुये ग्यारवीं शताब्दी के नमिसाधु ने कहा है – प्रकृत शब्द का अर्थ है लोगों का व्याकरण आदि के संस्कारों से रहित स्वाभाविक वचन व्यापार, उससे उत्पन्न अथवा वही प्राकृत है। प्राक् कृत पद से प्राकृत शब्द बना है और प्राक् कृत का अर्थ है – पहले किया गया। द्वादशांग ग्रन्थों में ग्यारह अंग ग्रन्थ पहले किए गए हैं और इन ग्यारह अंग ग्रन्थों की भाषा आर्ष वचन में – सूत्र में अर्धमागधी कही गयी है, जो बालक, महिला आदि को सुबोध-सहज गम्य है और जो सकल भाषाओं का मूल है यह अर्धमागधी भाषा ही प्राकृत है। यही प्राकृत मेघयुक्त जल की तरह पहले एक रूपवाली होने पर भी देशभेद से और संस्कार करने से भिन्नता को प्राप्त करती हुई संस्कत आदि अवान्तर विभेदों में परिणत हुई हैं अर्थात् अर्धमागधी प्राकृत से संस्कृत और अन्यान्य प्राकृत भाषाओं की उत्पत्ति हुई है। इसी कारण से मूल ग्रन्थकार रुद्रट ने प्राकृत को पहले और संस्कृत आदि का बाद में निर्देश किया है। पाणिन्यादि व्याकरणों में बताए हुए नियमों के अनुसार संस्कार पाने के कारण संस्कृत कहलाती है।[ix] इसी कारण मूलग्रन्थकार ने पहले प्राकृत को रखा पश्चात् संस्कृतादि को।

आगे कहते हैं –

सयलाओ इमं वाया विसंति एत्तो य णेंति वायाओ।
एंति समुद्दं चिय णेंति सायराओ च्चिय जलाइं।।[x]

जिस प्रकार जल समुद्र में प्रवेश करता है और समुद्र से ही वाष्प रूप में बाहर निकलता है, इसी तरह प्राकृत भाषा में सब भाषायें प्रवेश करती है और इस प्राकृत भाषा से ही सब भाषायें निकलती है। तात्पर्य यह है कि प्राकृत भाषा की उत्पत्ति अन्य किसी भाषा से नहीं हुई है किन्तु संस्कृत आदि सभी भाषायें प्राकृत से ही है।

आगे कहते हैं –

याद्योनिः किल संस्कृतस्य सुदशां जिह्वासु यन्मोदते।[xi]

प्राकृत को संस्कृत की योनि–विकास स्थान कहा है।

डॉ. पिशल ने भी मूल प्राकृत को जनता की भाषा कहा है। इसकी जड़े जनता की बोलियों के भीतर है।[xii]

प्राकृत भाषा का विकास – प्राकृत भाषा की प्रकृति सामान्यतया परिवर्तनशील रही है। वातावरण के प्रभाव से प्राकृत की ध्वनियों में परिवर्तन होता रहा है। किसी भी भाषा के विकास के लिए आवश्यक होता है कि उस भाषा में प्राप्त शिलालेख, सिक्के, प्रशस्तियाँ, ग्रन्थ आदि की समृद्धता हो, जो कि प्राकृत भाषा में भरपूर मात्रा में उपलब्ध है।

प्राकृत भाषा के विकास में आ रही समस्याएं और निदान –

भाषा की तीन अवस्थाएँ होती है –

1. प्राचीन भाषाएँ जिनका अध्ययन और वर्गीकरण पर्याप्त सामग्री के अभाव में नहीं हो सका हो।
2. जिनका सम्यक् शोध और विभाजन के आधार प्रचुर सामग्री होते हुए भी न हो सका हो।
3. जिनकी प्रचुर सामग्री है और जिनका वर्गीकरण और अध्ययन हो चुका हो और चल रहा हो।

इन तीन अवस्थाओं में समझने पर ज्ञात होता है दूसरी अवस्था में प्राकृत भाषा को सम्मिलित किया जाता है क्योंकि प्राकृत भाषा में प्रचुर मात्रा में शिलालेख, पाण्डुलिपियाँ, मूर्ति लेख, सिक्के, ग्रन्थ आदि उपलब्ध हैं लेकिन सम्यक् शोध और विभाजन की कमी आज भी जिसके कारण आज भी प्राकृत भाषा का विकास रूका हुआ है।

प्राकृत भाषा के विकास के लिए निम्न बिन्दुओं के आधार समझा जा सकता है –

- **बोली के आधार पर विकास –** तीसरी शताब्दी के नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने प्राकृत के सात भेद किए हैं – मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, वाह्लीका और दाक्षिणात्या। इन भेदों से यह तो स्पष्ट हो रहा है कि भौगोलिक परिस्थतियों के आधार पर जनसामान्य ने बोला है वही बोली के रूप में उभरकर आयी है। जो भाषा प्रकृति है स्वभावसिद्ध है और जनसामान्य द्वारा व्यवहार में प्रयोग की जाती हो वह प्राकृत है। महर्षि पाणिनि ने प्राकृत भाषा को जनसामान्य की भाषा कहा है, इसी जनसामान्य की बोली से भाषा परिवर्धित हुई है। वैदिक वाङ्मय की छान्दस् से संस्कृत की उत्पत्ति का स्वीकार की है।
- **भाषा विज्ञान के आधार पर विकास –** प्राकृत भाषा के विकास को समझने के लिए सर्वप्रथम हमें प्राकृत परिवारों और उनके काल विभाजन को समझना आवश्यक है, जिससे हम प्राकृत के क्रमिक विकास को समझ सकेंगे। सम्पूर्ण विश्व में लगभग 6000 भाषाएं हैं और प्रायः वे बोली भी जाती हैं। भारत में लगभग 455 भाषाएं हैं, यह आँकड़ा 2001 की जनगणना के अनुसार है। इसमें सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी है, जिसका 61% लोगों द्वारा बोली जाती है। प्रायः इन 455 भाषाओं की उत्पत्ति में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्राकृत भाषा का योगदान है।

आपस में संबंधित भाषाओं का **भाषा परिवार** कहते हैं। भाषाओं का वर्गीकरण का आधार वैज्ञानिक है। विश्व की समस्त भाषाओं का परिवार है। उन्नीसवीं शती में ही विद्वानों का ध्यान संसार की भाषाओं के वर्गीकरण की ओर आकृष्ट हुआ और आज तक समय-समय पर अनेक विद्वानों ने अपने अलग-अलग वर्गीकरण प्रस्तुत किये हैं; किन्तु अभी तक कोई वैज्ञानिक और प्रामाणिक वर्गीकरण प्रस्तुत नहीं हो सका है। इस समस्या को लेकर भाषाविदों में बड़ा मतभेद है। यही कारण है कि जहाँ एक ओर फेडरिख मूलर इन परिवारों की संख्या 100 तक मानते हैं वहाँ दूसरी ओर राइस विश्व की समस्त भाषाओं को केवल एक ही परिवार में रखते हैं।

- **भारत, ईरानी या आर्य परिवार –** यह नाम से ही स्पष्ट है कि इस परिवार में ईरान और भारतीय प्रायद्वीप से व्यवहृत भाषाएँ इमसें सम्मिलित हैं। इसे आर्य भाषा परिवार भी कहते हैं। भारत की आर्य भाषाएँ और ईरान की क्षेत्र की प्रमुख भाषा फारसी है। ईरान के लोग भी आर्य थे। ऐसा प्रतीत होता है कि 'ईरान का' इस शब्द का संस्कृत अनुवाद 'आर्याणाम्' बदला हुआ रूप लगता है। "ईरान का" इस शब्द प्राकृत में "आरियाणं" बनता है। बाद में प्राचीन ईरानी भाषा "अवेस्ता" का में आर्य का रूप "ऐर्य" था। यह संबंध काल्पनिक नहीं कहा जा सकता है क्योंकि प्राचीन युग में भारत और ईरान में धर्म का एक ही स्वरूप था, दोनों की भाषा में (अवेस्ता, प्राकृत और संस्कृत) बहुत समानता थी। भारत और ईरान के आर्य एक ही मूल के थे।

- **ईरान और प्राकृत भाषा का संबंध –**
- **प्रथम दृष्टि –** ईरान भी आर्यों का देश था। भारत और ईरान दोनों आर्यों के देश थे। प्राकृत में आर्य को आरिय या अज्ज कहा जाता है। आर्य देश में रहने वाले आरियणी (प्राकृत में) कहलाते हैं। यह संभव है कि आरियणी से अपभ्रंश होता हुआ ईरानी बन गया हो। ईरान शब्द का उत्पत्ति ''एर्यान'' से हुई है जिसका अर्थ है आर्यों की भूमि। यही एर्यान प्राकृत के आरियाण का विकृत रूप प्रतीत होता है जो अपभ्रंश रूप में ईरान बन गया।
- **द्वितीय दृष्टि –** ईरान का नामकरण ''ईरान'' सन् 1934 में पहलवी राजा ने किया। पहले इस देश का नाम पारस था। पारस के निवासी पारसी कहलाते थे। पारस प्राकृत भाषा का मूल शब्द है जिससे संबंधित प्राकृत के शब्द और उनके अर्थ निम्न हैं –

पारस – अनार्य, पारस देश का , ईरान। पारस देश में रहने वाले मुनष्य जाति।

पारसिय – फारस देश का।

पारसी – पारस देश की स्त्री। फारसी लिपि।

पारसीअ– फारस–निवासी।

- **तृतीय दृष्टि –** पारस (ईरान) की अवेस्ता भाषा रही है। जरथुस्त्र धर्म (पारस इरान) का जेंद अवेस्ता ही भारत का वेद है, ऐसे ही अवेस्ता का अर्थ वेद होता है और वेद का अर्थ अवेस्ता होता है। अवेस्ता में लिखा हुआ विषय निम्न हैं –
- **अवेस्ता में –**

हावनीम् आ रतुम आ

हओमो उपाइत् जरथुश्त्रेम्,

आत्रॅम् **पइरियओज्द, थॅन्तॅम्,**

गाथाओं स्-च स्रावयन्तेम्

आ दिम् पेरेसत् जरश्थुत्रो, को नरे अही ?

- **प्राकृत में –**

सावणीअ आ रिदु आ

सोमो उपागादो जरठोट्ठं,

अथरं पइरियसो दधदं,

गाथाओ सावयंतं

आ तं पुच्छदो जरठोट्ठं, को णरो आसि ?

यहाँ देखा जाए तो अवेस्ता की साम्यता प्राकृत बहुत नजदीक की है। ˘ इस प्रकार प्रयोग प्राकृत भाषा में मिलता है। पंचमी विभक्ति में ओ प्रत्यय लगाकर गाथाओ शब्द का प्रयोग है। आदि अनेक विशेषताओं के साथ साम्यता मिलती है।

प्राकृत भाषा की गणना मध्य भारतीय आर्यभाषा में की जाती है। इसका विकास वैदिक संस्कृति या छान्दस् भाषा से माना जाता है। यतः प्राकृत की प्रकृति वैदिक भाषा से मिलती-जुलती है। यह भी कहा जा सकता है।

- प्राकृत में व्यंजनान्त शब्दों का प्रयोग प्रायः नहीं होता है। जैसे - तावत् - ताव, स्यात् - सिया, कर्मन्- कम्म आदि।
- प्राकृत में विजातीय संयुक्त वर्णों में से एक का लोप कर पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर को दीर्घ कर दिया जाता है। जैसे - निश्वास - नीसास, विश्वास - वीसास, कत्र्तव्य -कातव्व, दुहरि-दुहार। यही वैदिक साहित्य में स्थिति है।
- स्वर भक्ति के प्रयोग से प्राकृत और छान्दस् दोनों में समानता है। जैसे प्राकृत में- क्लिन्नः - किलिन्न, स्व - सुव आदि। छान्दस में - तन्वः - तनुवः।
- पदरचना में भी दोनों में समानता है।
- तृतीया बहुवचन में प्राकृत में देव शब्द का देवेहि बनता है तो छान्दस् में देवेभिः।
- छान्दस् और प्राकृत में वर्ण लोप कर शब्द को संकुचित करना। जैसे प्राकृत में - राजकुल - राउल, कालायस - कालास आदि। छान्दस् में - पशवे-पश्वे, इत्यादि।
- अकारान्त प्रथमा के एकवचन में ओकारान्त - प्राकृत में - देवः - देवो। छान्दस् - सः चित् - सो चित्।

अतः उपलब्ध प्राकृत भाषा का विकास छान्दस् से ही हुआ है।

- **प्राकृत के भेद –** इसके मूलतः दो भेद है- कथ्य और साहित्य। जो जनबोली के रूपी में विद्यमान रही, प्राचीन समय में वर्तमान थी वह कथ्य है। इसका उपयोग छान्दस् भाषा में मिलता है। यह प्रथम स्तरीय प्राकृत है।

द्वितीय स्तरीय प्राकृत भाषा जिसमें लेखन कार्य संपादित हुये। तीन भागों में विभक्त किया गया है –

१) प्रथम युगीन प्राकृत समय –ई. पू. ६०० से ई. सन. २०० तक

२) मध्य युग समय – ई. २०० से ६०० तक

३) उत्तर अर्वाचीन युग या अपभ्रंश युग समय – ई. ६०० से १२०० तक

- **प्रथम युगीन प्राकृतों में –**

१) शिलालेखीय प्राकृत

२) धम्मपद की प्राकृत

३) आर्ष-पालि

४) प्राचीन जैन सूत्रों की प्राकृत

५) अश्वघोष के नाटकों की प्राकृत

- **मध्ययुगीन प्राकृत –**

१) भास और कालिदास के नाटकों की प्राकृत

२) गीतिकाव्य और महाकाव्यों की प्राकृत

३) परवर्ती जैन काव्यसाहित्य की प्राकृत

४) प्राकृत वैयाकरणों द्वारा निरूपित और अनुशासित प्राकृत

५) वृहत्कथा की पैशाची प्राकृत

- **उत्तर अर्वाचीन युग या अपभ्रंश युग –** इसके अंतर्गत विभिन्न देशों की प्राकृत भाषायें आती है।

- **वर्तमान में प्राकृत भाषा का महत्व –** वर्तमान में प्राकृत भाषा का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व है। प्राकृत भाषा भारत देश की प्रथम बोले जाने वाली भाषा है। जिसका प्रयोग जन-जन में सहजता के साथ के किया जाता है और जिसके पुट आज भी सभी भाषाओं में विद्यमान हैं। पश्चात् प्राकृत भाषा में धार्मिक एवं लोक साहित्य की भी रचना हुई। जिनका प्रभाव भारतीय संस्कृति पर दिग्दर्शित होता है।
- 1. **साहित्यिक महत्वः** प्राकृत भाषाओं में अनेक महत्त्वपूर्ण धार्मिक और साहित्यिक ग्रंथ लिखे गए हैं। जैन साहित्य में षट्खण्डागम, कषायपाहुड, समयसार, आचारांग सूत्र आदि, बौद्ध साहित्य में सुत्तनिपात आदि, संस्कृत साहित्य के प्रायः सभी ग्रन्थों में प्राकृत भाषा को लोक भाषा एव सुन्दर-सुन्दर उदाहरण प्रस्तुतों करने के लिए प्रयोग किया गया है। सट्टक की अवधारणा केवल प्राकृत भाषा में है।
- 2. **भाषा विकास में योगदानः** प्राकृत भाषाएँ आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का आधार रही हैं। प्राकृत से अपभ्रंश, अवहट्ट, हिंदी, मराठी, बंगला, असमिया, उड़िया, गुजराती जैसी भाषाओं के विकास में प्राकृत भाषा का योगदान महत्वपूर्ण है।
- 3. **शैक्षणिक महत्वः** विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में प्राकृत भाषाओं का अध्ययन किया जा रहा है। भारतीय प्राचीन ग्रंथों और धर्मशास्त्रों को समझने के लिए प्राकृत भाषा का ज्ञान जरूरी है। इसलिए आज भारत सरकार द्वारा शास्त्रीय भाषा के रूप में प्राकृत को स म्मिलित किया गया है।
- 4. **संस्कृति और धरोहर संरक्षणः** प्राकृत भाषाएँ भारतीय संस्कृति और वैभव को समझने का एक महत्वपूर्ण साधन हैं। पुरातात्विक महत्व की सामग्री, जैसे शिलालेख, प्राचीन सिक्के और साहित्यिक रचनाएँ प्राकृत में मिलती हैं, जो भारत के ऐतिहासिक और सामाजिक विकास को समझने में सहायता करती हैं।
- 6. **लोकभाषा के रूप में:** प्राचीन भारत में प्राकृत को जनसाधारण की भाषा माना जाता था, जबकि संस्कृत विद्वानों और शासकों की भाषा थी। प्राकृत का उपयोग नाटक और काव्य में भी होता था, जैसे कि कालिदास के नाटकों में विभिन्न पात्रों द्वारा अलग-अलग प्राकृत भाषाओं का उपयोग दिखाया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यह जन सामान्य की भाषा थी और विभिन्न क्षेत्रों में इसके अलग-अलग रूप प्राप्त थे।
- 7. **भाषाई विविधता और क्षेत्रीय भाषाओं पर प्रभावः** प्राकृत भाषा में विविधता में एकता का परिचय है। शौरसेनी, महराष्ट्री, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची आदि में

ध्वनि का भेद हैं, कुछ परिवर्तन क्षेत्र और वातवारण के अनुसार हुए हैं परंतु सभी हैं प्राकृत ही। इनका प्रभाव आज की आधुनिक भारतीय भाषाओं जैसे मराठी, गुजराती, हिंदी, और बंगाली पर पड़ा। क्षेत्रीय भाषाओं की संरचना, व्याकरण और शब्दावली में प्राकृत का योगदान स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

- **8. पुरातात्विक महत्वः** प्राकृत भाषा में लिखित शिलालेख, सिक्के और अभिलेख पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए, अशोक के शिलालेख प्राकृत में हैं, जिससे उस समय के प्रशासनिक और सामाजिक जीवन की जानकारी मिलती है। इससे यह समझने में मदद मिलती है कि प्राकृत भाषा का उपयोग प्राचीन भारत में शासकीय और धार्मिक संदेशों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए किया जाता था।
- **9. नाट्यकला और रंगमंच में उपयोगः** प्राचीन भारतीय नाटकों में प्राकृत भाषा का विशेष स्थान था। संस्कृत नाटकों में उच्च वर्ग के पात्र संस्कृत बोलते थे, जबकि सामान्य या निम्न वर्ग के पात्र प्राकृत बोलते थे। यह दर्शाता है कि प्राकृत भाषा किस प्रकार से सामाजिक वर्गों में विभाजित थी और इसे जनमानस की भाषा माना जाता था।
- **10. शोध और पुनरुद्धारः** आज भी प्राकृत भाषाओं पर शोध जारी है। कई भाषाशास्त्री और पुरातत्वविद् प्राकृत के महत्त्व को समझने और इसके साहित्य को पुनर्जीवित करने के प्रयास में लगे हुए हैं। विश्वविद्यालयों और अनुसंधान केंद्रों में प्राकृत के अध्ययन को लेकर रुचि बढ़ रही है।

इन सभी कारणों से, प्राकृत भाषा का महत्त्व आधुनिक काल में भी बना हुआ है और इसे भारतीय इतिहास, संस्कृति, धर्म, और भाषाविज्ञान के अध्ययन के लिए आवश्यक है।

संदर्भ सूची

[i] सिद्धहैमशब्दानुशासन८/१/१- अथ प्राकृतम्।

[ii] प्राकृतसर्वस्य-मार्कण्डेय

[iii] दशरूपक के टीकाकार धनिक २/६०

[iv] कर्पूरमंजरी के टीकाकार - वासुदेव

[v] षड्भाषाचन्द्रिका के रचयिता -लक्ष्मीधर

[vi] वाग्भट्टालंकार के टीकाकार - सिंहदेवगणी

[vii] शकुन्तला के टीकाकार - शंकर

[viii] टीका नमिसाधु कृत

[ix] प्राकृत-भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास/पृष्ठ 14, प्राकृत साहित्य का इतिहास/पृष्ठ 9

[x] आठवीं शताब्दी के विद्वान् वाक्पतिराज गउडवहो
[xi] नवमीं शताब्दी के विद्वान् कवि राजशेखर बालरामयण
[xii] डॉ. पिशल द्वारा
हिंदी भाषा का उद्भव और विकास – उदय नारायण तिवारी
प्राकृत रचना सौरभ पृष्ठ VII
प्राकृत व्याकरण/आचार्यश्री हेमचन्द कृत/सूत्र-1 की व्याख्या